धर्म जीवन

वार्षिक चन्दा रु. 50/-

दिसम्बर- 2011

श्री देवगुरू भगवान के 63 वे जन्मोत्सव के व्याख्यान का सार

-: महोत्सव :-

देव गुरु का जन्म दिन मनाना

देव गुरु का जन्म दिन मनाना, श्रद्धा भावों से मस्तक झुकाना,
नमन् करना और दिल को झुकाना, गुरू गाथा को सुनना सुनाना।
नीच भावों को मन में न लाना, उच्च भावों से हृदय सजाना।।
देव गुरु का..... 1

सुबह उठना, नहाना व गाना, नये कपड़े पहन कर भी आना,
गले मिलना, मुबारिक कहना, सबकी सेवा में तन को लगाना।
देव गंगा में दिल को डूबोना, आगे पापों में मन न लगाना।।
देव गुरु का..... 2

जब चमकेंगे सूरज लासानी, गाना खुशियों से गुरु की कहानी,
दोनों हाथों में फूलों को लाना, बड़ी श्रद्धा से मस्तक झुकाना।
खुशखबरी को खुद न छिपाना, इसे औरों में जाकर सुनाना।।
देव गुरु का..... 3

जब आवोगे गुरु के जन्म पर, भाई बन्धु को भी संग लाना,
जब आवोगे गुरु के जन्म पर, परिवारों के संग तुम आना।
जब गावोगे गुरु का तराना, हाँ बदलेगा तुमरा घराना।
देव गुरु का..... 4

जब जाओगे महोत्सव मनाकर, जाना घर-घर ये झंड़ा उठाकर,
जाकर गुरुदेव की जय कहना, मिथ्या पापा से दुनियां बचाना।।
हैं सच्चे, गुरु देवात्मा, यही सच्चाई सबको बताना।।
देव गुरु का..... 5

धर्म जीवन

खण्ड 24 अंक 12

दिसम्बर - 2011

वार्षिक मूल्य 50 रुपये

सम्पादक
डा. विनोद खेड़ा

सह सम्पादिका
सुरजीत बराड़

श्री देवगुरू भगवान के 63 वे जन्मोत्सव के व्याख्यान का सार

इस विश्व में सत्य और पूर्णांग धर्मावतार देवात्मा के आविर्भाव होने की आज 63 वीं और उनके जीवन व्रत ग्रहण करने की 31वीं वर्षगांठ है। यह देवात्मा जिन अद्वितीय देव शक्तियों को बीज रूप में लेकर प्रगट हुआ, उनमें काल के साथ साथ वह अपने नाना प्रकार के महा संग्रामों, त्यागों, व्रतों और साधनों आदि के द्वारा विकसित होकर जिस देव जीवन के लाभ करने के योग्य बना, वह देव जीवन मनुष्य जगत् के इतिहास में उसी प्रकार सर्वथा अद्वितीय है, जिस प्रकार उसकी देव शक्तियां अद्वितीय थीं।

इस देवात्मा ने अपनी जिन देव शक्तियों को विकसित करके विश्व के विकासकारी नियम के साथ पूर्णत: नीच गति रहित और उच्च गतिमूलक और इसीलिए एकता प्रतिपादक यह अद्वितीय जीवन लाभ किया, वह यह थीं:-

(1) सत्य विषयक पूर्णांग अनुराग शक्तियां - अर्थात् विश्व के प्रत्येक विभाग में क्या उसके किसी अस्तित्व व उसके किसी परिवर्तनकारी नियम - विशेषत: मनुष्य और उसके जीवन के सम्बंध में जो कुछ सत्य हो, उसके यथा संभव जानने, खोजने और जानने के अनन्तर उसे ग्रहण और यथा अवसर उसे प्रगट करने के लिए उसमें अनुराग मूलक सब प्रकार के उच्च भाव।

(2) हित विषयक पूर्ण अनुराग शक्तियां :- अर्थात् विश्व के प्रत्येक विभाग के सम्बंध में जब और जिस जिस का और जहां तक उसके द्वारा जिस जिस प्रकार का हित संभव हो, उसके लाने के लिए अनुराग मूलक सब प्रकार के उच्च भाव।

(3) असत्य विषयक पूर्ण विराग शक्तियां :- अर्थात् विश्व के प्रत्येक विभाग के सम्बंध में ऐसी प्रत्येक असत्य मूलक गति को जो मनुष्यात्मा के लिए हानिकारक हो, उसके विषय में ज्ञान प्राप्त करने पर उसे आप त्याग करने और उससे पूर्णत: मुक्त रहने और जहां तक संभव हो, उसे औरों से त्याग कराने और उससे मुक्त रखने के लिए उसमें विराग व घृणा - मूलक सब प्रकार के उच्च भाव।

(4) अहित विषयक पूर्ण विराग शक्तियां :- अर्थात् विश्व के प्रत्येक विभाग के सम्बंध में मनुष्यात्मा की जो जो गति उसके लिए अहित

उत्पादक हो सकती है, उसके विषय में ज्ञान लाभ करने पर उसे आप त्याग करने और उससे पूर्णत: मुक्त होने और रहने, और जहां तक संभव हो, उसे औरों से त्याग कराने और उन्हें उससे मुक्त रखने के लिए विराग व घृणा मूलक सब प्रकार के उच्च भाव।

ऐसे देवात्मा का यह अद्वितीय देव जीवन जिन चार प्रकार के महा अद्‌भुत परन्तु स्पष्ट लक्षणों से पहचाना जा सकता है, वह यह है: –

1) मनुष्य के सम्बंध में (1) उसकी गठन (2) उसके विनाश और विकास (3) उसके मुख्य लक्ष्य (4) उसके परम आदर्श के विषय में पूर्णत: नई और विज्ञानमूलक शिक्षा अर्थात,

(1) मनुष्यात्मा का रूप

(2) मनुष्यात्मा में उसकी नीच व उच्च गतियों के द्वारा नीच व उच्च परिवर्तन

(3) मनुष्यात्मा की नीच और उच्च गतियों के विनाश और विकासकारी फल

(4) मनुष्यात्मा का विश्व के साथ गाढ़ सम्बंध और उस पर विश्व के विनाश और विकास विषयक अटल नियमों के अटल कार्य

(5) मनुष्यात्मा की विनाशकारी नीच गतियों और उनके विकारों से मोक्ष और उसकी साधन विधि

(6) मनुष्यात्मा में विकासकारी उच्च गतियों की उत्पति और उन्नति की आवश्यकता और उसकी साधन विधि

(7) मनुष्यात्मा का उसके भौतिक शरीर के साथ सम्बंध

(8) मनुष्यात्मा की उसके भौतिक शरीर के त्याग के अनन्तर परे की अवस्था

(9) मनुष्यात्मा का मुख्य व परम लक्ष्य

(10) मनुष्य के सत्य और परम आदर्श

अत्यंत गूढ़ विषयों के सम्बंध में पृथ्वी के सब धर्म सम्प्रदायों की कल्पना मूलक शिक्षा से पूर्णत: अतीत सत्य शिक्षा का प्रचार।

2) **<u>अबोधी परन्तु अधिकारी मनुष्यों के जीवन में: –</u>**

(1) अज्ञान तिमिरनाशक और

(2) सत्य और असत्य, हित और अहित पथदर्शक देव ज्योति का विचित्र कार्य

(3) अबोधी परन्तु अधिकारी मनुष्यों की नीच गतियों में परिवर्तन लाने वाली प्रबोधक शक्तियों का विस्मयजनक कार्य

(4) अबोधी परन्तु अधिकारी मनुष्यों में उच्च गतिदायक उच्च भावों की जगृति और उन्नति उत्पादक शक्तियों का अलौकिक कार्य।

इसलिए अपने इस अद्वितीय देव जीवन के विचार से यही देवात्मा सब अधिकारी मनुष्यों के लिए: –

(1) विज्ञानमूलक सत्य व देव धर्म का एक मात्र सच्चा और पूर्ण शिक्षक

(2) एक मात्र सच्चा और पूर्ण आदर्श

(3) एक मात्र सच्चा और पूर्ण उपास्य

(4) एक मात्र सच्चा और उनकी योग्यता के अनुसार पूर्ण मोक्षदाता, और एक मात्र और उनकी योग्यता के अनुसार उच्च गति व धर्म जीवन दाता है।

इस अद्वितीय देव जीवन के विकसित करने में देवात्मा को जिस जिस प्रकार के महा त्याग करने पड़े हैं, वह यह हैं:-

(1) धन सम्पत्ति का त्याग
(2) 'बिरादरी' का त्याग
(3) स्वास्थ्य का त्याग
(4) मिथ्या विश्वासों का त्याग
(5) ब्रह्मो समाज का त्याग
(6) नेक नामी और इज्ज़त का त्याग
(7) सुख और शांति का त्याग
(8) संतान का त्याग
(9) मित्रों का त्याग
(10) देव समाज से सम्बंध रखने वाले नाना जनों का त्याग, इत्यादि।

इन में से पहले, दूसरे, तीसरे और पांचवें प्रकार के त्यागों का उस हिन्दी पुस्तक में उल्लेख किया गया है, कि जो कुछ दिन हुए छपकर प्रकाशित हो चुकी है, और जिसका नाम 'अपने देव जीवन के विकास और जीवन व्रत की सिद्धि के लिए मेरा अद्वितीय त्याग' है, और मिथ्या विश्वासों के त्याग और सत्य सिद्धान्तों की प्राप्ति का उसी की रची हुई उस पुस्तक में वर्णन है, जिसका नाम (मुझ में देव जीवन का विकास' है।) शेष त्यागों का पहली पुस्तक के अन्य भागों में छपने की संभावना है।

आज के ही दिन परन्तु आज से 31 वर्ष पहले देवात्मा ने अपने इसी देव जीवन के विकास क्रम में अपने जिस जीवन व्रत की घोषणा की थी, उससे पहले इस पृथ्वी में किसी मनुष्य ने वैसी घोषणा नहीं की, इसलिए उसके देव जीवन की न्याई, उसका यह जीवन व्रत भी पृथ्वी में अद्वितीय था।

(2)

देवात्मा ने इस अद्वितीय जीवन व्रत को ग्रहण करके पहले से भी बढ़ चढ़कर अपने देव जीवन के उच्च प्रभावों को अपने चारों ओर फैलाना आरंभ किया। उसके इन अलौकिक प्रभावों ने अधिकारी आत्माओं मे प्रवेश करके उन में अलौकिक परिवर्तन उत्पन्न किया। इसलिए उन्होने उन नाना महा हनिकारक और कई अवस्थाओं में महा भयानक पापों और अपराधों से उद्धार लाभ किया, जिनसे उनका कोई प्रचलित मत व विश्वास, मंत्र व जाप, पाठ व पूजन, गुरू व आचार्य, ऋषि व मुनि, उपास्य देवता व देवी, पीर व पैगम्बर, हादी व रहनुमा नहीं कर सका और नहीं कर सकता था।

ऐसे सैकड़ों परिवर्तित जनों को देवात्मा की विचित्र देव ज्योति में नाना कल्पना मूलक मिथ्या धर्म मतों की हकीकत (वास्तविकता) दिखाई दी, और उन्हें सत्य धर्म का थोड़ा व बहुत ज्ञान लाभ हुआ।

ऐसे ही मनुष्यों में से बीसियों जनों ने हानि परिशोध विषयक बोध उत्पन्न हुए, और उन्होंने देव समाज में आने से पहले जिस जिस का कोई पदार्थ व धन अपहरण किया था, उसका उन्होंने उचित रूप से परिशोध किया यहां तक कि उनमें से कई जनों ने सैकड़ों और हजारों रुपया दुखी हृदय और क्षमा प्रार्थना के साथ उन लोगों को वापिस किया, कि जिन से उन्होंने एक व दूसरे रूप से

अपहरण किया था।

ऐसे सैंकड़ों जनों के रहन सहन और उनके दैनिक जीवन में श्रेष्ठ परिवर्तन आया।

ऐसे सैंकड़ों जनों से नाना प्रकार की ऐसी बुरी रस्में यथा बाल विवाह और मृत्यु के अवसरों पर नाना प्रकार के अपव्यय और अन्य हानिकारक प्रथाएं, स्यापा, स्त्रियों में अनुचित पर्दा आदि दूर हो गई, और इनके भिन्न खान पान, देश भ्रमण, व्यवसाय और स्त्री शिक्षा आदि के सम्बंध में उनके अन्य नाना प्रकार के कुसंस्कार छूट गए।

कितनों के भीतर उच्च भाव जाग्रत हुए और बहुतों ने देवात्मा के जीवन व्रत में यथासाध्य सेवाकारी बनने के लिए व्रत ग्रहण किए।

इन सैकड़ों जनों की संतान और उनके भिन्न औरों के लिए धर्म विकासलय, हाई स्कूल, विधवा और सधवा आश्रम और 'अछूत' जनों के लिए स्कूल आदि नाना संस्थाएं स्थापित हुई।

विविध प्रदेशों में साधन आश्रम बने, और कार्य श्रेत्र खोले गए।

सैकड़ों पुस्तकें छपीं और कई समाचार पत्र जारी हुए और इन्हीं जनों को विकास तत्व के आधार पर अर्थात उनके आत्मिक जीवन की अपनी अपनी अवस्था के अनुसार धीरे धीरे श्रेणीबद्ध करके देवात्मा ने देव समाज नामक वह हितकर समाज संगठित की, कि जो इस पृथ्वी में पूर्णत: निराली है।

अब यह देव समाज भी अपने जिन चार लक्षणों के द्वारा पृथ्वी के अन्य सब सम्प्रदायों से अलग पहचानी जाती है, वह यह है: -

1) इसकी सबसे निम्न श्रेणी में भी जो जन स्त्री व पुरुष - प्रविष्ट होते हैं, उनके लिए और कई कर्तव्य कर्मों के भिन्न निम्नलिखित दस पापों से मोक्ष पाकर उनसे सदा के लिए विरत रहने की प्रतिज्ञा करना आवश्यक है, अर्थात्

(1) मैं व्यवसाय विषयक चार प्रकार के पाप न करूंगा। यथा,

(क) मैं रिश्वत न लूंगा।

(ख) मैं धोखा देने की नियत से कम व अधिक न तोलूंगा, अथवा कम व अधिक न नापूंगा।

(ग) मैं धोखा देने की नियत से किसी को कुछ की कुछ चीज़ न दूंगा।

(घ) मैं किसी काम के सम्बंध मे कुछ उजरत व दाम नियत करके अथवा जो पहले से नियत हो उसके लेने व देने में कोई बेईमानी न करूंगा।

(2) मैं चोरी न करूंगा।

(3) मैं किसी से उधार ली हुई व अपने पास किसी की धरोहर (अमानत) रखी हुई कोई वस्तु दबा न लूंगा।

(4) मैं बिना उचित अधिकार के किसी से कोई वस्तु छीन न लूंगा व उसके छीनने में किसी की सहाय न करूंगा।

(5) मैं जुआ न खेलूंगा।

(6) मैं व्यभिचार अथवा कोई और अप्राकृतिक पाप न करूंगा, और एक पत्नी के इस दुनियां में जीते हुए दूसरा विवाह न करूंगा।

(7) मैं किसी मादक द्रव्य अर्थात् शराब, अफीम, भंग तम्बाकू चरस, चंडू और कोकेन आदि का मादकता के लिए सेवन न करूंगा।

(8) मैं मांस व अंडे अथवा मांस व अंडों की बनी हुई कोई वस्तु न खाऊंगा और न किसी ओर को खाने को दूंगा और न उस के खाने के लिए किसी और को अनुरोध करूंगा।

(10) मैं बिना उचित कारण के किसी जीव को बध न करूंगा।

2) देव समाज के सेवकों अर्थात् मेम्बरों में से यदि कोई जन कुसंग में पड़कर अथवा किसी और कारण से इनमें से अपनी किसी प्रतिज्ञा को तोड़ कर फिर कोई पाप कर्म करे, तो उसका पता और प्रमाण मिलने पर उसे उससे उद्धार लाभ करने के लिए आवश्यक दंड और साधनों का दिया जाना और यदि वह ऐसे दंड और साधन ग्रहण न करना चाहे, अथवा कोई और ऐसी अवज्ञा करे, कि जिससे उसका समाज में रखना उचित बोध न हो, तो उसका समाज से पूर्णत: अलग किया जाना।

3) देव समाज में उसके प्रविष्ट जनों को उनके आत्माओं की अपनी अपनी अपेक्षाकृत उच्च व निम्न अवस्था के अनुसार विविध श्रेणियों में विभक्त किया जाना, और ऐसा करने में किसी जन के सांसारिक वैभव अर्थात् उसके धन, मान, पद और पुरुष व स्त्री आदि के भेद का कोई विचार न किया जाना।

4) देव समाज के सेवकों के लिए जहां तक संभव हो, इसी लोक में उनकी सच्ची मोक्ष और उनमें सात्विक धर्म भावों की जाग्रति और उन्नति के लिए 'धर्म विकासालय' जैसी पूर्णत: अनोखी संस्था और उसमें विज्ञान मूलक सत्य साधन प्रणाली का वर्तमान होना।

देवात्मा ने ही अपने अद्वितीय जीवन व्रत की सिद्धि के लिए प्रत्येक वर्ष की परीक्षा के साथ साथ क्या उसकी गठन और क्या उसी प्रचार प्रणाली में धीरे-धीरे नाना प्रकार का परिवर्तन ला लाकर और उसमें नई-नई संस्थाएं स्थापना करके देव समाज को वह उत्तम रूप दिया है, कि जो अब उसे प्राप्त है, और आगे भी जब तक उसके लिए ऐसा करना संभव रहेगा, तब तक वह उसे अपेक्षाकृत और भी श्रेष्ठ रूप देने की चेष्टा करता रहेगा।

(3)

अब यहां पर और बातों को छोड़ कर यह बताना आवश्यक है, कि ऐसे अद्वितीय देवात्मा को, जो न केवल मनुष्य जगत् किन्तु उसके भिन्न विश्व के अन्य सब जगतों के सर्वोच्च हित के लिए प्रगट हुआ था, गहरे उत्साह से स्वागत करने के स्थान में नाना सम्प्रदायों के हज़ारों और लाखों लोगों ने उसके प्रति घृणा का क्यों प्रकाश किया, और उसके सताने और उत्पीड़ित करने के लिए सैकड़ों जनों के हृदय क्यों तैयार हो गए? फिर देवात्मा के लिए और महा त्यागों के भिन्न उनके साथ युद्ध व संग्राम करने की क्यों आवश्यकता हुई? और उस एक ने उन हज़ारों और लाखों के सामने छाती निकाल कर और अपने अति कोमल हृदय में उनके हाथों से हज़ारों तीर खाकर और आघात पाकर, घायल और लहुलुहान होकर, तड़पकर और बिलबिला कर, शरीर के विचार से स्वास्थ्य खोकर, रोगी बन कर और एक बार नहीं, कई बार मृत्युप्राय: अवस्था में पहुंचकर, परन्तु आखिरकार फिर मृत्यु शैय्या से उठकर, पिछले 31 सालों में सदा जय पर

जय और अपने जीवन व्रत में उन्नति पर उन्नति क्यों लाभ की?

कहा गया है:-

'प्रकृति मिले मन मिलत है, अन मिलते न मिलाय, दूध दही से मिलत है, कांजी से फट जाय।'

किसी विषय में दो विरोधी प्रकृति रखने वाले जनों में अनमेल का पैदा होना नेचर के अटल नियम के अनुसार और इसीलिए पूर्णतः स्वाभाविक है। यदि राम किसी ऐसी चाल को घृणा करता हो , जिसे श्याम पसंद करता हो, तो उस चाल के सम्बंध में राम और श्याम में विरोध उत्पन्न हो जाएगा यहां तक कि यदि राम और श्याम में पिता पुत्र अथवा भाई-भाई का सम्बंध भी हो, तो भी उस विषय में दोनों के दिल फट जाएंगे और ज्यों ज्यों यह अन्मेल बढ़ेगा, त्यों-त्यों उनके दिल भी एक दूसरे से दूर होते जाएंगे, और उनमें परस्पर के लिए घृणा की मात्रा भी अधिक होती जाएगी। अब यदि इस घृणा के साथ साथ उनमें से किसी में न्याय भाव वर्तमान न हो और द्वेष भाव वर्तमान हो, तो वह दूसरे को अकारण हानि पहुंचाने की चेष्टा भी करेगा- कई वंशों में सैंकड़ों माता पिता का अपनी ही जाई लड़कियों का वध करना, कितने ही सगे भाईयों का परस्पर कई प्रकार से हानियां पहुंचाना, कितने ही जनों का एक दूसरे के सम्बंध में मिथ्या कलंक लगाना, झूठे मुकदमे दायर करना, सताना, मार पीट करना, जान से मार देना, किसी के सम्बंधी व उसकी किसी सम्पति को नुकसान पहुंचाना इत्यादि, नाना प्रकार के कर्म इसी विरोधता का प्रमाण हैं।

मनुष्यों में इस विरोधिता के उत्पन्न करने में उसकी जो जो शक्तियां बहुत बढ़ चढ़ कर भाग लेती व लेती रही हैं, वह यह है:-

1) **<u>ईर्षा भाव</u>** - अर्थात् किसी की किसी विषय में अच्छी अवस्था व अच्छे कार्य में कृतकार्यता व उसके किसी अच्छे गुण को देख व जान कर क्लेश अनुभव करना और जल उठना। इधर एक ओर अपनी किसी झूठी प्रशंसा के सुनने में भी तृप्ति व आराम पाना, उधर दूसरी ओर किसी और की सच्ची प्रशंसा में भी कष्ट बोध करना और कुढ़ना और इसलिए उसकी उस सच्ची प्रशंसा को न मानना और अपनी ओर से उसके सम्बंध में कुछ और झुठे दोष और कलंक लगाकर खुश होना।

2) **<u>अंह मूलक घमंड, अनुचित पक्षपात और अनुचित घृणाभाव अर्थात्</u>**

अ) अपने में झूठ मूठ भी किसी अच्छे गुण को मानना और अपनी झूठी प्रशंसा करके तृप्ति व हर्ष लाभ करना और किसी को झूठ मूठ भी अपनी अपेक्षा हीन बताकर खुश होना, और किसी के किसी सच्चे सदुगुण के जानने के योग्य होकर भी उसे मानना न चाहना, अथवा उसे जानकर भी उसकी प्रशंसा न करना और किसी के सम्बंध में किसी झूठे कलंक के सुनने और मानने, लगाने और फैलाने के लिए तैयार रहना।

आ) किसी और की किसी रुचि व उसके किसी स्वभाव को (चाहे वह ठीक भी हो) अपनी रुचि और अपने स्वभाव के विरूद्ध पाकर उसे घृणा करना और उसकी झूठी निन्दा करना।

3) **<u>द्वेष भाव, अर्थात्</u>**

अ) अपनी किसी अनुचित क्रिया के सम्बंध में किसी से कोई उचित रोक पाने पर उसे शत्रु के रूप में देखना और अपने झूठे बचाव के निमित्त उलटा उस पर झूठे कलंक लगाना।

आ) किसी से अपनी किसी अनुचित कामना की तृप्ति न पाने पर उसे हानि पहुंचाने के लिए विवश तैयार हो जाना, और उस की कोई हानि करके व कराकर खुश होना।

4) **<u>अनुचित ममता व मोह भाव - अर्थात्</u>**

अ) अपने किसी झूठे विश्वास व संस्कार के विरुद्ध किसी से कुछ सुनने में कष्ट मालूम करना और उसे शत्रु के रूप में देखना व प्रगट करना।

आ) अपने परिवार व कुल व अपनी जाति के किसी सच्चे दोष व बुरे आचार के विरुद्ध किसी से कुछ सुनने पर कष्ट मालूम करना और उसे शत्रु के रूप में देखना व प्रगट करना।

उपरोक्त प्रकार के प्रबल भावों को प्राप्त होकर मनुष्यों के लिए आपस में एक दूसरे के साथ अन्मेल की अवस्था ग्रहण करना और कई अवस्थाओं में एक दूसरे को नाना प्रकार से उत्पीड़ित और एक दूसरे को भांत - भांत के क्लेश देना और कई प्रकार से हानियां पहुंचाना अनिवार्य है। दुनिया भर में कोई देश ऐसा नहीं, जहां उपरोक्त प्रकृति रखने वाले मनुष्यों ने परस्पर के सम्बंध में इस प्रकार की महा शोचनीय क्रियाएं नहीं कीं, अथवा कम व ज़्यादा अब नहीं करते।

देव जीवन के विविध अंगों अर्थात् सत्य और हित विषयक पूर्ण अनुराग और असत्य और अहित विषय पूर्ण वैराग शक्तियों में विकसित होकर क्या मेरे आदर्श, क्या मेरे चरित्र व आचार, क्या मेरी आकांक्षाओं और गतियों में मनुष्य मात्र की तुलना में इतनी विभिन्नता और विशेषता उत्पन्न हो गई, कि जिससे जहां एक ओर मैं इस पूर्णांग देव प्रकृति के कारण सर्वथा और सब अंगों में उन सबका सच्चा और पूर्ण हितैषी अर्थात् मोक्ष ओर विकास आकांक्षी बन गया, वहां सैकड़ों और हज़ारों जनों ने अपनी उपरोक्त प्रकृति के कारण मुझे उसके विपरीत अनुभव किया क्योंकि, प्रकृति - मूलक उपरोक्त प्रकार की विभिन्नता के कारण उनके लिए मुझे ऐसा अनुभव करना आवश्यक था। इसीलिए जहां एक ओर मैं अपने देव जीवन के विकास के साथ साथ अपनी बढ़ती हुई देव ज्योति में उनके धर्म विश्वासों व संस्कारों में जो - जो कुछ मिथ्या देखता, उसे उनकी आकांक्षा और इच्छा के विरुद्ध, किन्तु अपनी देवप्रकृति से विवश होकर मिथ्या ही प्रगट करता, उनके नाना असत्य और कल्पित मतों और धर्म के नाम से झूठे साधनों को असत्य बताता, उनके नाना बुरे आचारों, अनुष्ठानों और उनकी नाना हनिकारक प्रथाओं और पाप क्रियाओं पर बड़े प्रबल रूप से आक्रमण करता, वहां वह मेरे ऐसे सब आक्रमणों से झल्लाकर और अपनी महा शोचनीय उपरोक्त प्रकृति के वशीभूत होकर मुझे अपना बहुत बड़ा शत्रु और हानिकर्ता समझते और अनुभव करते।

मेरे प्रति लोगों की यह विरोधता किसी एक व दूसरे समाज के जनों मे आबद्ध नहीं रही, किन्तु क्या ब्राह्मो, क्या आर्या, क्या सिख, क्या सनातनी,

क्या मुसलमान, क्या ईसाई आदि सभी सम्प्रदायों के लोग कम व ज़्यादा मेरे विरोधी बने हैं। इनमें से औरों की अपेक्षा पहले तीन प्रकार के सम्प्रदायों के लोग बहुत बढ़- चढ़ कर और इनमें से भी आर्य समाज के लोग सबसे अधिक और कुछ देवसमाज से निकले व निकाले हुए जन विशेष रूप से मेरे विरोधी रहे हैं।

मनुष्य जगत् में जैसी मेरा देव जीवन और मेरा जीवन व्रत पूर्णत: अद्वितीय था, वैसे ही उसकी सिद्धि में मुझे जितने काल तक और जिस-जिस प्रकार की विरोधता का सामना करना पड़ा है, जितनी प्रकार की हानियां उठानी पड़ी हैं, और जितना और जैसा कुछ घोर से घोर कष्ट और महा दारुण और कई अवस्थाओं में असह्य दुख सहना और मृत्युप्राय: अवस्था में पहुंच जाना पड़ा है, वह भी अद्वितीय प्रमाणित हुआ है।

मुझे इस अपने अद्वितीय जीवन व्रत के सम्बंध में सदा सच्चे रहने के लिए और महा त्यागों के भिन्न जिस जिस प्रकार के महा कष्टों और दुखों को भोगना पड़ा है, उनका कुछ संक्षिप्त वृतांत यह है:-

24 दिसम्बर 1892 ई. को मेरे 42वें जन्मोत्सव पर मेरे सेवको ने अपनी जो ऐड्रैस मेरे सम्मुख पढ़ी, उसके उत्तर में और बातों के भिन्न मैंने यह कहा:-

"मेरे प्रिय सेविको! आज से 10 वर्ष पहले जब मैंने आम राय और अपने बहुत से परिचित्त जनों की इच्छा के विरूद्ध मनुष्य मात्र की आत्मिक उच्च सेवा के लिए अपने आप को भेंट करने का पूरा इरादा किया, तब उस समय यद्यपि मुझे अपने जीवन के सम्बंध में और कई प्रकार की दिक्कतों, तकलीफ़ों और मुसीबतों का ख्याल गुज़रता था, तथापि यह ख्याल बहुत कम होता था, कि जिन की भलाई के लिए मैं अपने आप को पूर्णत: समर्पण करता हूं, उन्हीं की ओर से मुझे दिनों दिन वह बढ़ चढ़ कर विरोधता और बदलूकी प्राप्त होगी कि जिसका तुमने अपनी इस एड्रैस में संक्षिप्त रूप से इशारा किया है"

"क्या इस समय और क्या उसके बाद मेरे आत्मा में जिस सत्य अनुराग विषयक प्रबल शक्ति ने काम किया है, और जिसके मैं पूर्ण अधिकार में रहा हूं, वह यह, कि मुझे अपनी उच्च ज्योति के लिए सदा सच्चा रहना चाहिए। मैंने अपने इस प्रबल भाव के अधीन रहकर अपने सम्मुख अपने लिए तरह तरह के दुखों और उत्पीड़नों का सामना देखकर भी कभी उनसे पीठ नहीं फेरी। मैंने अनेक बार तुम लोगों पर भी यह प्रगट किया है, कि यदि कुल दुनिया मुझ से दूर से दूर होती चली जाय तो भी मैं अपने लिए सच्चा रहने की कोशिश करूंगा, उसी के अनुसार चलूंगा मै जब यह जानता हूं कि मैं एक जगह ठहर नहीं सकता, और मेरे चारों तरफ जो परिवर्तन होना ज़रूरी है, तब मैं इस कुल परिवर्तन में किसी और दिग न जाकर मेरी जिस उच्च ज्योति ने मेरे जीवन का मुझ पर परम लक्ष्य प्रगट कर दिया है, और मेरी जिन उच्च शक्तियों ने मुझे लगातार उसके लिए सच्चा रखा है, उसी ज्योति और उन्हीं शक्तियों को उन्नत करूंगा। इसी में जहां मेरा सर्वोच्च कल्याण है, वहां जिन जिन का

मेरे साथ सच्चा सम्बंध होगा, जो मेरे साथ जुड़ेंगे, जो मेरे अनुगत बनेंगे और जो मुझे अपना समझेंगे, उनका भी सर्वोच्च भला है।"

"अपने इस परम लक्ष्य में सच्चे रहने के लिए मैंने उन सब चीज़ों की बिलकुल परवाह नहीं की, कि जिन की दुनियां के पुजारी परवाह करते हैं और जिनकी बहुत से कहलाने वाले धार्मिक लोग भी अपनी नीच प्रकृति के कारण केवल यही नहीं कि परवाह करते हैं, किन्तु बहुत सी अवस्थाओं मे परवाह करना ज़रूरी समझते हैं, हां मेरे लिए उनकी परवाह करना ही संभव न था। मैं जिस प्रकृति को लेकर जन्मा और जिस रूप में ढला, उसने मुझे ऐसा ही बना दिया, और मेरे लिए यह सब कुछ स्वभाविक हो गया।"

इससे कुछ सप्ताह पहले मैंने अपने विषय में यह बताया था:-

"मैं यदि किसी नाम व प्रशंसा आदि का भूखा होता, तो मैं समय-समय में एक व दूसरी भलाई के काम में कुछ चंदा देकर क्या गवर्नमेंट और क्या अपने देशवासियों की तरफ से खूब प्रशंसा और शुक्रगुज़ारी लाभ कर सकता था। देश की राजनैतिक और अन्य साधारण सभाओं में शमिल होकर और थोड़ी देर के लिए उपस्थित जनों के सम्मुख उनकी मनभाती तकरीर करके, मैं देश हितैषिता का लोकप्रिय मुकुट पहन सकता था, और अपनी इस देश हितैषिता की खबरों के समाचार पत्रों में प्रकाशित होने पर बहुत सुख्याति लाभ कर सकता था, और नाना प्रकार के महा कष्टदायक अत्याचारों और उत्पीड़नों के दुखों और हज़ारों विरोधियों की ओर से काले से काले और बुरे से बुरे रूप में प्रगट किए जाने, अपमानित और लांछित होने और अन्य प्रकार से सताए जाने से बच सकता था, और क्या शरीर और क्या आत्मा दोनों के विचार से बहुत कुछ सुख का जीवन व्यतीत कर सकता था। परन्तु मैंने अपने जीवन व्रत के सम्बंध में सब प्रकार से सच्चा रहने के निमित्त उपरोक्त सब प्रकार के मान, यश, धन, स्वास्थ्य और सुखों आदि का त्याग किया। और यह सब कुछ किन के लिए? उन्हीं के सर्वोच्च हित के लिए कि जिनके हाथ से मुझे यह सब अत्याचार, उत्पीड़न, दुख और कष्ट मिल रहे हैं।"

"याद रखो कि मैंने यह समझकर कि मेरे इस पूर्ण आत्म समर्पण से ही हिन्दु जाति, भारतवर्ष और मनुष्य मात्र का प्रकृत और सर्वोच्च कल्याण हो सकता है, उन कुल भयानक दुखों और विपदों और उत्पीड़नों को रात दिन धैर्य के साथ सहा है कि जिनके एक एक आघात से कोई साधारण जन एक दिन में ही चकनाचूर होकर खत्म हो सकता है।"

इससे एक मास पहले अर्थात् 26 नवम्बर सं. 1892 ई के एक लेख में मैंने अपने विशेष जीवन व्रत के सम्बंध में यह प्रगट किया था:-

"इस देश की पुरानी परन्तु मिथ्या फ़िलासफ़ी का विश्वासी कोई भी जन मुझे यह कह सकता है, कि जब तू दुनिया के हर एक अपवित्र सम्बंध से मुक्त है, और अपनी प्रकृति के विचार से इस दुनियां के लोगों में से नहीं है, तब फिर क्यों उन लोगों में रह कर और उनके लिए जी कर वर्षो से

यह महा भयानक और असाधरण दुख और कष्ट सह रहा है? क्यों नहीं ऐसे सब लोगों से ही अपना सब सम्बंध काट कर अलग हो जाता, कि जिनसे यह कुल दुख और अज़ाब तुझ तक पहुंच रहे है, मेरे प्रगट होने का खास मकसद है जिसका पूरा होना क्या इस देश और क्या कुल दुनिया की सर्वोच्च भलाई के लिए ज़रूरी है और वह इस महा दुख और कष्ट के ग्रहण करने के बिना पूरा नहीं हो सकता।"

फिर 26 दिसम्बर 1892 ई. को मैंने धर्म जीवन पत्र में अपने जीवन व्रत के विषय में यह लिखा था: -

"मुझे अपने जीवन व्रत सम्बंधी किसी कार्य मे कोई विघ्न व हानि पहुंचते देखकर जितना आघात लगता है, और मुझे उससे जितना दुख मिलता है, उसे मेरे सिवाय और कौन अनुभव कर सकता है? मुझे यह अत्यंत दुख और क्लेश क्यों मिलता है? इसलिए कि मैं और मेरा मिशन दो चीज़ें नहीं, किन्तु एक ही हैं। मुझ में देव जीवन सम्बंधी जो निराले और अति उच्च बोध वर्तमान हैं, उन पर जो चोट लगती है, वह यद्यपि उन शक्तियों से विहीन किसी जन को कुछ प्रतीत नहीं होती, तथापि वह मेरे लिए अत्यंत दुखदाई और कष्टकर होती है- ऐसी दुखदाई और ऐसी कष्टकर कि मेरे लिए उसमें से कई बार गुज़रना भी प्राय: असंभव हो जाता है। मैं इन दुखों से बहुत तड़पता और बिलबिलाता हूं और उनके आघातों से मेरा शारीरिक स्वास्थ्य भी नष्ट होता है। परन्तु प्रश्न यह है, कि मैं यह सब महात्याग किसके लिए और क्यों करता हूं? इसलिए कि यदि मैं यह महा त्याग ग्रहण न करूं, तो मेरे जीवन का परम लक्ष्य सिद्ध नहीं हो सकता। और नाना प्रकार के मिथ्या विश्वासों, मोह और पापों में ग्रस्त आत्माओं का उद्धार और कल्याण नहीं हो सकता। इसलिए जब मैं ऐसे जीवन व्रत को ग्रहण और उसकी सिद्धि के लिए सब प्रकार के त्याग और संग्राम करने और नाना प्रकार के दुख और उत्पीड़न सहने के लिए ही प्रगट हुआ हूं, तब मेरे लिए इस अद्वितीय त्याग का ग्रहण करना भी आवश्यक है। मुझे यह पूर्ण विश्वास है, कि मेरा यह सब प्रकार का आत्म-समर्पण और त्याग वृथा न जाएगा, किन्तु जिस अद्वितीय उद्देश्य की सिद्धि के लिए मैं यह सब कुछ कर रहा हूं, वह अवश्य पूरा होगा, और जो जन जहां तक इस मार्ग में मेरा साथ देंगे, उससे वहां तक जैसे वह खुद बनेंगे, वैसे ही मेरे इस महान उद्देश्य की सिद्धि में भी सहायक प्रमाणित होंगे।

फिर 25 दिसम्बर 1892 ई. को मैंने अपने सेवकों की उसी ऐड्रैस के उत्तर में और बातों के भिन्न यह भी कहा था: -

"अपने इस महा लक्ष्य के लिए अपने आप को भेंट करके मेरे लिए सब प्रकार के पिशाचत्व के साथ संग्राम के लिए खड़ा होना अवश्यम्भावी था, और ऐसे अनोखे संग्राम में विजयी होने के निमित्त मेरे लिए वह सब महा त्याग करना आवश्यक था, कि जो मैंने किया है।"

"मैं यदि हिन्दु विधि के अनुसार अपने सब सम्बंधों का काट कर एकांत में जा बैठता और जो जन मेरे पास आते, उन्हें कुछ मीठे-मीठे वचन

सुना कर खुश करता रहता, तो मैं साधु और ऋषि और महर्षि कहलाकर "लोक प्रिय" बन सकता था, परन्तु मैं अपनी विशेष प्रकृति के कारण ऐसा नहीं कर सका। मुझे नेचर ने एक विशेष संग्राम के लिए उत्पन्न किया था, इसी लिए मुझे इस संग्राम की जिन्दगी प्राप्त हुई और मेरी आयु के गत दस वर्ष जिस प्रकार के अनोखे और महा भयानक युद्ध में बीते हैं, और इस लम्बे काल में मैं जैसी-जैसी कठिनाइयों और जिस जिस प्रकार के दुखों, कष्टों और उत्पीडनों मे से गुज़रा हूं, उन्हें वही जन अनुभव कर सकता है, कि जो मेरी जैसी प्रकृति रखता हो, उसके भिन्न और कोई नहीं।"

"यदि मैं अपने इस विशेष लक्ष्य के लिए सच्चा रहा हूं, यदि मैंने संसार के भक्तों और पिशाचत्व के साथियों की परवाह न करके अपने जीवन व्रत के अनुसार देवत्व की जय के लिए उनके साथ युद्ध किया है, और उनके पिशाचत्व पर अपनी सामर्थ्य के अनुसार पूरे ज़ोर के साथ आक्रमण किया है, और पिशाचत्व के साथियों की ओर से जो जो बदसलूकियां मिलनी संभव थीं, उन सब को अपने ऊपर लिया है, और यह सब कुछ इसलिए कि यदि मेरे विरोधी जन पिशाचत्व का साथ देने के लिए है, तो मै देव जीवनधारी जन पिशाचत्व का साथ देने के लिए हैं, तो मैं देव जीवनधारी होकर देवत्व की जय और अधिकारी मनुष्यों में उच्च जीवन उत्पन्न करने के लिए हूँ और जब मेरे देवत्व की जय से ही उनका भला हो सकता है और उनमें वह जान आ सकती है कि जिसके आने से वह उच्च जीवन संबंधी नाना प्रकार की बरकतों के लाभ करने के भिन्न दुनिया में एक शक्तिशाली जाति बन सकते हैं, तब इन कुल बरकतों के लाने के लिए मुझे हर एक अज़ाब को अपने ऊपर लेना और हर एक त्याग स्वीकार करना आवश्यक है। तुम जानते हो कि कोई मनुष्य एक दिन के लिए भी दुख और कष्ट सहना पसंद नहीं करता, और लाखों लोग अपने एक एक सुख और सांसारिक लाभ को सम्मुख रखकर अपने बच्चों और निकट के सम्बंधियों के साथ भी अत्याचार करने से नहीं टलते, तब फिर यदि किसी का दिल और दिमाग ठीक हो, तो वह मेरी उस उच्च प्रकृति का अनुमान कर सकता है, कि जिसके द्वारा मैंने एक दो दिन नहीं, एक दो मास नहीं, किन्तु पिछले दस वर्षो तक पिशाचत्व के साथ संग्राम करके विविध प्रकार का दुख और क्लेश और उत्पीड़न सहा और नाना प्रकार का अन्य महा त्याग किया है।"

"मेरे भीतर एक एक उच्च बोध वर्तमान है, कि उसके विपरीत किसी घटना के उत्पन्न होने से जो चोट मेरे हृदय पर लगती है, उसका सिलसिला मेरे लिए इतना लम्बा और क्लेशदायक होता है, कि एक एक बार मैं उसके सहने की ताब नही ला सकता, और अपना कलेजा थाम कर रह जाता हूं। ऐसे समय में मैं यह सोचने लगता हूं कि मेरी ज़िन्दगी में ऐसा दिन कब आएगा, जब मैं अपने आप को ऐसे अनुकूल सामानों और ऐसे उच्च जीवनधारी जनों से घिरा हुआ देखूंगा, जहां इस प्रकार की दुर्घटनाओं का उत्पन्न होना संभव न रहेगा।

"मैं इसी दुनिया में सच्चा स्वर्ग चाहता हूं। मैं इसी दुनिया मे उस सत्य धर्म को लाना चाहता हूं, कि जो सब प्रकार के पापों और अपराधों को मिटाता है, और नाना सम्बंधों में ऐसे मीठे, सच्चे और भरोसे के योग्य सम्बंधी पैदा करता है, कि जिनके द्वारा उनका जीवन परस्पर के लिए सब पहलुओं में सुखदाई और हितकर बन सकता है, जो मनुष्यात्माओं का सत्य मोक्ष और उच्च जीवन की ऐसी अवस्था प्रदान करता है, कि जिसे पाकर कोई मनुष्य न केवल किसी और मनुष्य के लिए किन्तु उसके भिन्न पशु जगत्, उद्भिद जगत् और भौतिक जगत् के लिए भी अधिक से अधिक कल्याणकारी बन सकता है। यदि इस प्रकार के आत्मा उत्पन्न हों, तो जहां इससे मेरे जीवन का उद्देश्य पूरा होता है, वहां इस दुनिया के लिए सबसे उच्च भलाई का मार्ग खुल जाता है।"

"इस देव असुर संग्राम में पीठ दिखा कर पीछे को भागना जैसे मेरे लिए अपने आत्मा को नष्ट करना है, वैसे ही अपने ऐसे दृष्टांत और प्रभावों से और हज़ारों को तबाह करना है। इसके विपरीत उसमें स्थिर रहकर और आगे पांव बढ़ाकर और "आगे बढ़ो, आगे बढ़ो" की पुकार जारी रखकर करना जैसे अपने देव जीवन का सच्चा परिचय देना है, वैसे ही दूसरी तरफ इस युद्ध में कृतकार्यता लाभ करना है।"

इसी वर्ष अर्थात् 1892 ई में मुझे उससे पहले के कुल सालों की अपेक्षा अपने विरोधियों के उत्पीड़न से जितने प्रकार का बढ़चढ़ कर कष्ट मिला, विविध प्रकार की हानिया पहुंचीं, जितने प्रकार के महा भयानक और हृदय विदारक आघात लगे और उनके द्वारा असह्य दुख मिले, उनमें से एक अंश का भी ठीक-ठीक वर्णन करना मेरे लिए असंभव है। इसी साल गिरधरराय, सुन्दर सिंह और प्रकाशदेव अपनी नाना नीच गतियों के कारण देव समाज निकाले गए थे। और मेरे सैकड़ों विरोधियों ने इन कृतघ्नों को अपने साथ मिला कर मुझे और मेरे विरुद्ध वह विराट सभा की थी, कि जिसमें प्राय: दो हज़ार लेाग शामिल थे। इस सभा में क्या मेरे, क्या मेरे परिवारिक और क्या मेरे सामाजिक जनों के सम्बंध में जितने और जिस जिस प्रकार के पूर्णत: झूठे कलंक लगाकर हमें बेइज्ज़त बदनाम किया गया था, हमारे लिए हज़ारों लोगों के दिलों में अत्यंत हानिकारक घृणा पैदा करने की कोशिश की गई थी, मेरे मरने और मेरे पत्नी की शीघ्र विधवा होने के निमित्त प्रकाश रूप से जिस प्रकार कामनाएं की गई थीं, और मेरे कई उपस्थित जनों पर शारीरिक आक्रमण हुए थे, उन सबका मुझ शरीर के विचार से रोगी ओर अत्यंत दुर्बल ओर हृदय के विचार से पूर्ण सत्य और हित परायण देवात्मा पर जैसा कुछ सांघातिक असर पड़ा था, उसे मेरे सिवाय कोई और अनुभव करने के योग्य न था। यह सभा पहली नवम्बर सन् 1892 ई. को हुई थी। मैंने अपनी इस रोगी, दुर्बल, पीड़ित और दुखिया अवस्था में भी इन कृतघ्नों के नाम मिथ्या कलंकों और उनकी महा शोचनीय अवस्था के प्रगट करने के लिए इस सभा के एक दिन बाद ही अर्थात् तीसरी नवम्बर को एक लेक्चर देना चाहा। परन्तु मेरे विरोधियों ने यह समझ कर कि मेरे लेक्चर से

उनकी महा दुष्ट करतूतों की सारी कलई खुल जाएगी, हमारी सभा में पहुंच कर क्या अपने महा कोलाहल और क्या हमारी बेंचों ओर लैम्पों आदि के तोड़ने और क्या अन्य प्रकार से इतने विघ्न उत्पन्न किए, कि जिससे मेरा यह लेक्चर न हो सका। इधर मेरा यह लेक्चर न हो सका, उधर ईश्वर के इन पुजारियों के महा हृदय विदारक आघातों और अत्याचारों से मेरी पहले से बहुत दुर्बल स्नायु प्रणाली पूर्णतः चूर चूर हो गई। मेरे दिल की चाल अत्यंत धीमी हो गई। वह बार बार डूबने लगा, मेरे पेट ने भी काम करना छोड़ दिया, यहां तक कि वह दवा भी ग्रहण न कर सकता था। मेरी हालत निहायत नाज़ुक हो गई। 9 नवम्बर से 13 नवम्बर तक मेरे अस्तित्व में मृत्यु और जीवन मे संग्राम जारी रहा, और मैं बार बार अचेत होने लगा। मेरे समीपी जन मेरे जीने की ओर से निराश हो गए। परन्तु इस महा संकटमय अवस्था में भी मेरे भीतर अपने जीवन व्रत की ओर ध्यान था इसी मृत्यु शैय्या पर से मैंने अत्यंत कष्ट की अवस्था में अपने जीवन व्रत सम्बंधी संग्राम के विषय में बहुत धीमी आवाज़ से और बहुत रुक रुक कर अंग्रेज़ी भाषा में 13 नवम्बर को जिस भाव के प्रकाशक कुछ शब्द अपने मुहं से निकाले थे वह यह थे:-

"To fight on, to fight on fo my Unique Mission has been a life-principle with me, even at the point of perishing."

"Hold on, hold on, is the whishper that I hear from within, and certainly I will hold on, weeping and wiling and struggling I will hold on."

"It is the greatest thing to hold on, and to die in battle, with untruth and wrong-die on one's post of duty. Yes, there lies the victory, and there lies the mandood."

"No where and under no circumstances I have become faithless to my life vow, and I do mean to remain perfectly faithful to it in future."

भावार्थः-

"अपने अद्वितीय जीवन व्रत की सिद्धि के लिए-मृत्यु के आने पर भी लगातार संग्राम किए जाना मेरे जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य रहा है।"

"इस युद्ध में बार-बार मेरे हृदय मे यह गूंज उठती रही है, कि तुम कभी पीछे न हटो, कभी पीछे न हटो और निश्चय मैं कभी पीछे न हटूंगा, रोता हुआ, बिलबिलाता हुआ, तड़पता हुआ मैं अवश्य इस युद्ध क्षेत्र में लड़े जाऊंगा।"

"असत्य और अहित के साथ युद्ध करते करते और अपने कर्तव्य साधन में निहत हो जाने से बढ़कर कोई और श्रेष्ठ कार्य नहीं। हां, इसी में मनुष्यता है, और इसी में जय है।"

"मैं किसी स्थान और किसी अवस्था. में भी अपने जीवन व्रत के लिए कभी बेबफा नहीं बना, और आगे भी मैं उस के लिए सदा सच्चा रहना चाहता हूं।"

(4)

अपनी इस मृत्यु शैय्या पर पड़े हुए देवात्मा ने अपने अद्वितीय जीवन के लिए सदा सच्चे रहने और उस के लिए सब प्रकार का आवश्यक त्याग स्वीकार करने के सम्बंध में जो भाव प्रकाश किया था, वह भी उनके जीवन व्रत की न्याई एक ऐसा भाव है कि जिस का दृष्टांत मनुष्य जगत् में कहीं और नहीं मिलता। इसलिए क्या उस समय तक और क्या उसके अनन्तर अपने जीवन व्रत के लिए लगातार सच्चा रह कर और उसके लिए सब प्रकार का आवश्यक और लगातार अद्वितीय त्याग करके देवात्मा ने जो देव जीवन विकसित किया, वह भी निश्चय अद्वितीय था। देवात्मा में इस देवजीवन के लगातार विकसित होने से उसमें-

(1) आत्मा के रूप में उसके जीवन के सम्बंध में अज्ञान तिमिर नाशक और सत्य और असत्य, हित और अहित प्रदर्शक जो अति महान और अति विचित्र देव ज्योति उत्पन्न हुई,

(2) नीच गति विनाशक और उच्च व सात्विक भाव उत्पादक और वर्द्धक जो-जो पूर्ण प्रबोध दायिनी शक्तियां प्रगट हुई,

वह उसके इस देव जीवन की विशेषता और उसके अद्वितीय होने का साक्षात् प्रमाण हैं।

देखो! (एक चुम्बक को हाथ में लेकर और उसे उपस्थित जनों को दिखाकर) लोहे के और टुकड़ों की न्याई यह भी एक लोहे का टुकड़ा है। परन्तु इसमें बिजली की शक्ति ने प्रवेश करके इसे चुम्बक (मैगनेट) बना दिया है, और अब यह जिस प्रकार की विचित्र शक्ति से सम्पन्न है, वह शक्ति किसी ओर साधारण लोहे के टुकड़े में पाई नहीं जाती। इसकी इस विशेष शक्ति का नाम चुम्बक शक्ति व ताकत मिकनातीसी है। इसी विशेष शक्ति के बल को यह चुम्बक लोहे के इन नीचे पड़े हुए छोटे छोटे टुकड़ों में (इन टुकड़ों की ओर उपस्थित जनों की दृष्टि फेर कर) संचार करके उन्हें भी यह नीचे से ऊपर को उठा लेता है, और इसी प्रकार यह टुकड़े अपनी बारी में अपने से छोटे-छोटे इन सैकड़ों लोहे के कणों में (लोहे के चूरे को दिखाकर) उसी शक्ति को संचार करके उन्हे भी नीचे से ऊपर को उठा लेते हैं। देखो, शक्ति का यह कैसा आश्चर्यजनक कार्य है!! ठीक इसी प्रकार देवात्मा ने अपनी अद्वितीय देव शक्तियों को अपने अद्वितीय त्याग और संग्राम के साधनों से विकसित करके नाना प्रकार की नीच गतियों के अधीन, जीवनदायक उच्च शक्तियों से विहीन, जीवन के सत्य और उच्च पथ से भ्रष्ट और पतित मनुष्यात्माओ को इस दुनियां में जिन-जिन के लिए और जहा तक संभव है, सत्यमोक्ष देने और उनमें धर्म विषयक सात्विक भावों के जाग्रत और उन्नत करने की अपने आत्मा में अद्वितीय सामर्थ्य लाभ की है।

उसका इन देव शक्तियों से विभूषित होकर इस काल में प्रगट होना यद्यपि मनुष्य जगत् के इतिहास में एक अत्यत अनोखी घटना है, तथापि नेचर के और विभागों की न्याई मनुष्य विभाग में भी उच्च परिवर्तन व विकास का जैसे अटल नियम जारी है, उसके ठीक अनुसार इसी लिए पूर्णत: स्वाभाविक है। और उसका इन शक्तियो से विभूषित

होकर प्रगट होना मनुष्य जगत् में सर्वोच्च परिवर्तन लाने के लिए आवश्यक और अवश्यम्भावी था - हां उसी प्रकार आवश्यक था जिस प्रकार इस पृथ्वी की उत्पत्ति और उसकी अवस्था में उच्च परिवर्तन लाने के लिए हमारे सूर्य का आविर्भाव आवश्यक था।

अब यदि कोई नीच जन इस पृथ्वी के जन्मदाता और उपकारी सूर्य को कोसना आरंभ करे, अर्थात् उसके विषय में यह कहे व लिखे कि यह सूर्य तो तवे की स्याही से बना है, और अपने रूप के विचार से पूर्णत: काला है, तो जिस प्रकार उसके ऐसा कहने से यहां तक कि उस एक के भिन्न ऐसे कहने वालों की संख्या हज़ारों की भी होने से वह सूर्य स्याही का और काला नहीं बन जाता, और वह अपने विशेष अस्तित्व के द्वारा इस पृथ्वी पर प्रतिदिन अपनी जिन शुभ्र किरणों और अपने इस कार्य में कोई रोक नहीं आ जाती, उसी प्रकार देव जीवन के सच्चे सूर्य देवात्मा को यदि कोई जन महा नीच व उससे भी बढ़कर महा कृतघ्न और पिशाच बन कर और उसके सम्बंध में अपनी ओर से बड़े से बड़े झूठे कलंक घड़ कर और उस पर अन्य ऐसे झूठे कलंकों को मढ़कर काले से काले रूप में बताने की चाहे हज़ार कोशिश करे परन्तु वह उसकी अद्वितीय देव ज्योति और उसके अद्वितीय देव बल के अद्वितीय प्रभावों को जिन्हें वह नाना आत्माओं तक पहुंचा रहा है कदापि रोक नहीं सकता। पिछले इकत्तीस वर्षो में नाना नीच जनों की तरफ से ऐसी जितनी महा पाप मूलक क्रियाएं की गई हैं, उनका निष्फल होना इस बात का बहुत बड़ा और अकाट्य प्रमाण है।

शोक! ओर महा शोक! कि कोई जन भारतवासी कहलाकार अपने देश के ही इस अद्वितीय और सर्वोच्च और पूर्ण हितकर्ता आविर्भाव के विरूद्ध ऐसी महापाप मूलक क्रियाएं करे, और इसी देश के अन्तर्गत देव समाज के इतिहास में अपने आप को अत्यंत घृणा के साथ याद किए जाने की वस्तु बन जाय! अच्छे भारतवासियों का गौरव इसमें है, कि वह उसके इस अद्वितीय आविर्भाव और उसके जीवन व्रत और उसके कार्य और फलों की अद्वितीय महिमा को पहचान कर उसके लिए अपने हृदय में पवित्र अभिमान (फखर) अनुभव करें, और जहां तक उसके देव प्रभावों के द्वारा वह अपने और अपने पारिवारिक और अन्य जनों का भला कर सकते हों, वहां तक अपना और उनका भला करें और यदि किसी कारण से वह ऐसा न कर सकते हों, तो एक व दूसरे प्रकार से उसकी कोई और सहाय करें। परन्तु भारतवासी होकर जो लोग उसके और उसके जीवन व्रत के लिए विरोधी हों, उनकी ऐसी अवस्था जैसी कुछ शोचनीय हो सकती है, उसका अनुमान किया जा सकता है!!

अब जबकि देवात्मा का आविर्भाव विश्व की अपनी विकास विषयक कार्य प्रणाली के अनुसार है, वह इस प्रणाली के अनुसार विश्व के इस महान कार्य में एक ऐसे अद्वितीय उद्देश्य के पूर्ण करने के लिए प्रगट हुआ है, कि जो उसके विकास कार्य की पूर्णता के लिए परमावश्यक था और है, और जबकि वह अपने देव जीवन व अपनी देव शक्तियों के विचार से अपनी सब प्रकार की वासना, उत्तेजना और अहं आदि शक्तियों का अधिपति व प्रभु और

इसी लिए मनुष्य जगत का भी शिरोमणि है, तब वह विश्व के जिस अद्वितीय उद्देश्य और उसके सिद्ध करने के लिए जिस पूर्ण योग्यता व सामर्थ्य को लेकर प्रगट हुआ है, उनके इस उद्देश्य व जीवन व्रत को कोई जन-किसी कृतघ्न व अन्य महा नीच जन का तो कहना ही क्या है- केवल यही नहीं कि मिटा नहीं सकता, किन्तु मिटाने की चेष्टा करने से वह अपने आत्मा को ही दिनों दिन नीच, पापी, मैला, और चाहे बहुत से मिलकर, चाहे एक प्रकार का और चाहे दूसरे प्रकार का अपना कोई बढ़िया नाम रखकर ऐसी चेष्टा करें, परन्तु उनका परास्त होना लाज़मी है।

याद रखो, कि तुम वास्तव में आप महा अधम होकर और दिखाने के लिए अपना कोई उच्च नाम रखकर अकेले-अकेले व अपने जैसे कई जनों के साथ मिल कर अपना उच्च नाम सूचक कोई कार्य उसी प्रकार नहीं कर सकते, जिस प्रकार 'बाज़ारी औरतें' अकेले-अकेले व कई मिलकर और अपने इस जत्थे का 'सती धर्म प्रचारिणी सभा' नाम रखकर किसी व्यभिचारी स्त्री को सती नहीं बना सकतीं, क्योंकि ऐसा होना नेचर के विकास विषयक नियम के पूर्णत: विरुद्ध है- इसीलिए पिछले इकत्तीस वर्षों में जो-जो जन (और ऐसे जनों की संख्या बहुत बड़ी है) देवात्मा की शरण प्राप्त होने के अनन्तर किसी एक व दूसरे कारण से उसके देव प्रभावों से कट गए, वह अपने अपने आत्माओं के द्वारा ऐसे सब फलों के पैदा करने के अयोग्य हो गए, कि जो देवात्मा की देव शक्तियों के उच्च प्रभावों के द्वारा देव समाज में उत्पन्न हुए और हो रहे हैं और जिस प्रकार किसी जीवित वृक्ष से उसकी कोई शाखा उसके जीवन रस से कट जाने पर पूर्णत: सूखकर प्राणविहीन हो जाती है, और छोटी शाखा व पत्तों व कलियों व फूलों के निकालने की योग्यता नहीं रखती, उसी प्रकार उन आत्माओं का हाल हुआ है, कि जो देवात्मा से कट गए है, और उनके जीवन दायक उच्च प्रभावों से वंचित व विहीन हो गए हैं। वह देवात्मा के जीवन दायक प्रभावों से कटकर और इन प्रभावों के विचार से मुर्दा बनकर उन फलों के प्रसव करने के लिए योग्य नहीं रहे कि जो वह देवात्मा के द्वारा जीवित रहकर करते व कर सकते थे। पिछले इकत्तीस वर्षों की यह पूर्ण साक्षी इस विषय में भी तुम्हारी आंखों के खोलने के लिए काफी से बहुत बढ़कर प्रमाण है।

अब यदि तुम इन चार सत्यों को सदा स्मरण रख सको, तो तुम्हारा ऐसा करना तुम्हारे लिए बहुत कल्याणकारी हो सकता है:-

(1) जिस प्रकार तुम सूर्य और उसकी महिमा को सूर्य की ही ज्योति में देख सकते हो, उसके बिना नहीं देख सकते, उसी प्रकार तुम देवात्मा के प्रकृत रूप और उसके देव जीवन में विकसित होकर सत्य धर्म के सम्बंध में, कल्पना मूलक धर्म मतों से अतीत, विज्ञानमूलक जिन नाना प्रकार के पूर्णत: नए सत्यों की शिक्षा है, उन सत्यों और उनके ज्ञान और साधन की आवश्यकता और उनकी महिमा का देवात्मा की ही अद्वितीय देव ज्योति को पाकर देख और उपलब्ध कर सकते हो, बिना उसके कदापि और कहीं नहीं

(2) देवात्मा के प्रति तुम अपने हृदय में श्रद्धा, विश्वास, पवित्रता और आकर्षण के उच्च भाव उत्पन्न और उन्नत करके और उनसे इस दुर्लभ देव ज्योति के लिए दीन भाव से आकांक्षी बन के ही उसे लाभ कर सकते हो, उसके बिना कदापि और कहीं नहीं।

(3) देवात्मा के ही देव प्रभावों को पाकर तुम अपनी-अपनी योग्यता के अनुसार नीच गतियों से पूर्ण मोक्ष और उच्च व धर्म जीवन में पूर्ण विकास लाभ कर सकते हो, उसके बिना कदापि और कहीं नहीं।

(4) देवात्मा के यह देव प्रभाव तुम जिन-जिन साधनों के द्वारा लाभ कर सकते हो, उनसे कट कर व उदासीन रहकर तुम्हारे आत्मा का धीरे धीरे पतित और नष्ट होना अवश्यम्भावी है।

तब आज के इस स्मरणीय विशेष दिन में देवात्मा की देव ज्योति में तुम इस सत्य को उपलब्ध करो, कि तुम्हारा उसकी शरण और देव समाज में आना और उसमें रहना तुम्हारे कितने बड़े सौभाग्य का विषय है, और उसकी इसी ज्योति में तुम यह भी देखो, कि जो जन अपनी एक व दूसरी वासना व उत्तेजना आदि के वशीभूत व दास होकर देवात्मा व देवसमाज से कट गए, उनका इस प्रकार से कट जाना उनके और कई अवस्थाओं में उनके पारिवारिक व अन्य जनों के लिए भी कैसे दुर्भाग्य का विषय है।

इस विशेष दिन में केवल यही नहीं, कि तुम देवात्मा की शरण में आने और देव समाज मे प्रविष्ट होने के परम सौभाग्य और अपने उच्च अधिकार को विशेष रूप से उपलब्ध करो, किन्तु तुम में से जो-जो जन सत्य मोक्ष और विकास के आकांक्षी हों, और उसके निमित्त अपने हृदय में प्रेरणाएं अनुभव करते हों, वह क्या अपनी ऐसी शुभ आकांक्षा की सिद्धि के लिए और क्या देवात्मा के उस अद्वितीय जीनव व्रत में सेवाकारी बनने के लिए कि जिसकी आज इकत्तीसवीं शुभ वर्षगांठ हैं, कम से कम एक साल के लिए अपने आप को अर्पण करें और इसके भिन्न तुममें से यथा साध्य प्रत्येक जन इस शुभ अवसर पर देवसमाज के महान और उच्च कार्य के लिए जहां तक संभव हो, धन का दान करे, क्योंकि जिस अद्वितीय देवात्मा के अद्वितीय देव प्रभावों के संगठन करने का देवसमाज में पूर्णत: निराला और अति आश्चर्यजनक काम हो रहा है, उसके लिए जितना और जिस प्रकार का उचित दान हो, उससे बढ़कर हितकर और कोई दान नहीं हो सकता।

सूचना-देवात्मा की इस अपील को सुनकर उस समय एक दो व चार जनों ने नहीं, किन्तु 23 जनों ने खड़े होकर अपने आप को उपरोक्त उद्देश्य के लिए अर्पण किया। इन अर्पणकर्ता जनों में दो जन ग्रेजुएट भी थे। उपस्थित जनों ने हज़ारों रुपए नकद दान देने के भिन्न जितने और धन का अपने पास से दान देने व औरों से मांग कर एकत्र करने का इकरार किया, वह कुल रकम प्राय: पन्द्रह हज़ार रूपए की थी। (यह आज से 98 वर्ष पहले)।

Published on 5th of the month
20
दिसम्बर – 2011
WPP - Regd. Postal No.Pb (0077) 09/011
Regd. with Registrar News Paper No. 72258/88

महोत्सव का प्रोग्राम

शुक्रवार 9 दिसम्बर 2011

प्रवेश सभा 4.30 बजे शाम

शनिवार 10 दिसम्बर 2011

1. पहली सभा सुबह 8.30 बजे

विषय: परम पू० भगवान देवात्मा का परम अवश्यक वा जीवन दायक सम्बन्ध

2. पब्लिक लैक्चर – शाम 4 बजे

वक्ता: श्रीमती सुरजीत बराड़

3. शाम 7.30 बजे भक्ति संगीत

रविवार 11 दिसम्बर 2011

विशेष दिन

6.30 सुबह

सूर्य निकलने से पहले, जो कि आत्मिक जगत के सूर्य भगवान देवात्मा के जन्म का समय है, बैंड बाजा, कीर्तन, शुभ कामनाएं और जय ध्वनि।

1. पहली सभा 8.45 बजे सुबह

विषय: भगवान देवात्म का परम लक्ष्य, उसकी सिद्धि के लिए उनका तप, उसके सम्बन्ध में हमारी ओर से कुर्बानियों की अवश्यकता, धन और जन की अपील

2. दूसरी सभा 1.30 बजे
   बच्चों की सभा
3. भक्ति संगीत की सभा
4. पब्लिक लैक्चर शाम 4 बजे
   वक्ता : डा० विनोद जी खेड़ा

सोमवार 12 दिसम्बर 2011

1. पहली सभा 8.30 बजे सुबह
   सेवक सेविकाओं के ग्रहण, श्रेणियों में उन्नति वा परिवारिक अनुष्ठान
2. दूसरी सभा

विषय : देव प्रभावों के द्वारा मनुष्यात्माओं में परिवर्तन

3. भाव प्रकाश
4. देव आरती का गान और जय ध्वनि

नोट: 1) कृपा करके सब सेवक और सेविका अपनी ऐकाकारी के साथ सभा में शामिल हों।

2) अवश्यकतानुसार प्रोग्राम में तबदीली की जा सकती है।

3) अपने बिस्तर आदि साथ लाने की कृपा करें, और अपने आने की सूचना देने की कृपा करें।

(मन्त्री देव धर्म)

श्रीमान बलदेव सिंह जी, एम. ए, (लाईफ़ वर्कर) मंत्री – देव – धर्म – मिशन, प्रिंटर, पब्लिशर और मालिक "धर्म जीवन" ने ***Surya Laser Den, Chandigarh*** *से छपवाकर*

म. नं. 3154, सैक्टर 21 – डी, चण्डीगढ़ से प्रकाशित किया।

Book Posts